International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =7.938, July-December 2024, Submitted in November 2024, ISSN -2393-8048

भूमि उपयोग का बदलता स्वरूप

सुनिता भाटी, शोधार्थी, भूगोल विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, पीलिबंगा, हनुमानगढ़
डॉ. जयदेव प्रसाद शर्मा, सहायक आचार्य, भूगोल विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, पीलिबंगा, हनुमानगढ़

परिचयात्मक शोध की भूमिका

आधुनिक मानव की आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक उन्नति उसके प्राकृतिक व मानवीय संसाधनों के समुचित उपयोग पर निर्भर है। प्राकृतिक तत्वों के उपयोग के सदर्भ में मनुष्य की केन्द्रीय स्थिति होती है और मनुष्य की क्रियात्मक, संरचनात्मक व सामाजिक नियंत्रण की क्रियाओं के द्वारा प्राकृतिक पर्यावरण में परिवर्तन होता है। मनुष्य ने बंजर भूमि में आवश्यक सुधार व परिवर्तन कर इसके कृषि योग्य बनाया, नदियों पर बाधों का निर्माण कर विनाशकारी बाढ़ों को नियंत्रित किया, मरूस्थलों में अपने अथक प्रयासों से सिंचाई सुविधा उपलब्ध करवाकर मरूद्यानों में परिवर्तन किया।

अध्ययन क्षेत्र की मरूस्थलीय पारिस्थितिकीय तंत्र में भूमि संसाधन तथा जल संसाधन के कुशल प्रबन्धन से ही इस क्षेत्र को पोषणीय विकास के लिए सुदृढ़ बनाया जा सकता है। विकासशील देशों के आर्थिक विकास की आर्थिक क्रियाओं में विशेष रूप से कृषि संसाधनों का अत्यधिक योगदान रहा है। भारत जैसे विकासशील देश में जहाँ निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण लगातार कृषि भूमि क्षेत्र कम होता जा रहा है।

भूमि उपयोग का बदलता स्वरूप समय, समाज, और आर्थिक परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है। यह बदलाव प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग, मानव गतिविधियों, और पर्यावरणीय प्रभावों के कारण होता है। भूमि उपयोग का बदलना कृषि, शहरीकरण, उद्योग, और अन्य मानवीय गतिविधियों पर निर्भर करता है।

इस प्रकार, भूमि उपयोग का बदलता स्वरूप समय के साथ मानवता के विकास और पर्यावरणीय कारकों के प्रभावों का परिणाम है, और भविष्य में इसे और अधिक संतुलित और टिकाऊ बनाने की दिशा में कदम उठाए जाने की आवश्यकता है।

भूमि उपयोग के बदलते स्वरूप में विभिन्न कारक शामिल हैं, जिनमें तकनीकी विकास, जनसंख्या वृद्धि, और वैश्विक आर्थिक बदलाव प्रमुख भूमिका निभाते हैं। जैसे–जैसे मानव समाज ने नई तकनीकों को अपनाया, भूमि का उपयोग भी इस दिशा में बदला। उदाहरण के लिए, कृषि में रासायनिक उर्वरकों और सिंचाई प्रणालियों के उपयोग से फसलों की पैदावार में वृद्धि हुई, लेकिन इसके साथ ही पर्यावरणीय संकट जैसे मृदा प्रदूषण और जल स्रोतों का अत्यधिक दोहन भी हुआ। इसके अलावा, भूमि का उपयोग अब केवल कृषि कार्यों तक सीमित नहीं है। शहरी विस्तार के कारण, खासकर महानगरों में, भूमि का एक बड़ा हिस्सा आवासीय, वाणिज्यिक, और औद्योगिक उपयोग के लिए बदल गया है। इसने ग्रामीण इलाकों से शहरी इलाकों की ओर प्रवासन को बढ़ावा दिया है, जिसके परिणामस्वरूप शहरीकरण की गति तेज हो गई है। शहरीकरण के साथ–साथ, सड़कें, भवन, और अन्य संरचनाएं बनाई गई हैं, जो भूमि के प्राकृतिक उपयोग को बदल देती हैं।

भूमि उपयोग के इस बदलते स्वरूप ने कई पर्यावरणीय चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। प्राकृतिक आवासों का नष्ट होना, वनस्पति और जीवों की विविधता में कमी, जलवायु परिवर्तन, और जल संकट जैसी समस्याएँ आजकल प्रमुख चिंता का विषय बन गई हैं। भूमि की अत्यधिक शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के कारण, खेतों और वन क्षेत्रों का ह्रास हो रहा है, जिससे पर्यावरणीय संतुलन में भारी व्यवधान उत्पन्न हो रहा है। आज के समय में, भूमि उपयोग के बदलते स्वरूप को देखकर यह आवश्यक प्रतीत होता है कि इस बदलाव को स्थायी और पर्यावरण के अनुकूल तरीके से किया जाए। इसे सुनिश्चित करने के लिए भूमि उपयोग की योजनाओं में सुधार की आवश्यकता है, ताकि आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संरक्षण दोनों को संतुलित किया जा सके। उदाहरण के लिए, हरित निर्माण तकनीकों, पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित कृषि विधियों, और जल पुनर्चक्रण जैसी रणनीतियाँ भूमि उपयोग के बदलते स्वरूप को अधिक टिकाऊ बना सकती हैं। साथ ही, भूमि के अन्य उपयोगों में भी बदलाव देखा जा सकता है जैसे पर्यटन, ऊर्जा उत्पादन (विशेष रूप से सौर और पवन ऊर्जा), और जैव विविधता संरक्षण, जो भविष्य में भूमि के अधिक सहेजने और सतत उपयोग की दिशा में योगदान कर सकते हैं।

इस प्रकार, भूमि उपयोग का बदलता स्वरूप हमारे समाज, आर्थिक संरचना, और पर्यावरणीय तंत्र में महत्वपूर्ण बदलावों को दर्शाता है, और यह सुनिश्चित करना कि यह बदलाव संतुलित और टिकाऊ हो, आने वाले समय में सबसे बड़ी चुनौती बन सकती है।

श्रीगंगानगर के संदर्भ में भूमि उपयोग के बदलते स्वरूप का अध्ययन यह बताता है कि

इस क्षेत्र में आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संतुलन के बीच एक सामंजस्य स्थापित करना बेहद आवश्यक है। यह क्षेत्र अब न केवल कृषि के लिए जाना जाता है, बल्कि इसका महत्व उद्योग, आवासीय विकास और अन्य व्यापारिक गतिविधियों में भी बढ़ा है। भविष्य में, यह जरूरी है कि भूमि उपयोग की योजनाएँ इस प्रकार तैयार की जाएं, जो न केवल आर्थिक विकास को बढ़ावा दें, बल्कि सामाजिक और पर्यावरणीय नीतियों का भी पालन करें, ताकि श्रीगंगानगर का भूमि उपयोग एक संतुलित और स्थिर भविष्य की दिशा में बढ़ सके।

इस तरह से भूमि उपयोग के बदलते स्वरूप का भौगोलिक अध्ययन श्रीगंगानगर के विकास, पर्यावरण संरक्षण, और सामाजिक समरसता के बीच संतुलन बनाए रखने में अहम भूमिका निभा सकता है।

परिचयात्मक शोध के सोपान

प्रारंभिक काल में भूमि का प्रमुख उपयोग कृषि कार्यों के लिए था। जब मानवता ने कृषि कार्यों को शुरू किया, तो भूमि का अधिकांश हिस्सा खेती–बाड़ी के लिए उपयोग होता था। कृषि भूमि का विस्तार हुआ और लोगों ने भूमि से उत्पाद प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रकार की फसलें उगाईं। समय के साथ, जैसे–जैसे शहरीकरण और औद्योगिकीकरण बढ़ा, भूमि का उपयोग अन्य उद्देश्यों के लिए होने लगा। शहरों और कस्बों का विकास हुआ, और कृषि भूमि का एक हिस्सा आवासीय, वाणिज्यिक, और औद्योगिक क्षेत्रों में बदलने लगा। इससे भूमि उपयोग का स्वरूप तेजी से बदलने लगा, और अधिक भूमि शहरीकरण और निर्माण कार्यों के लिए उपयोग होने लगी।

भूमि उपयोग में बदलाव केवल शहरीकरण और औद्योगिकीकरण तक सीमित नहीं था, बल्कि इसने प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरणीय तंत्र को भी प्रभावित किया। जैसे–जैसे कृषि भूमि का शहरीकरण में रूपांतरण हुआ, वैसे–वैसे पर्यावरणीय संकट जैसे जलवायु परिवर्तन, मृदा अपरदन, और जल संकट भी बढ़ने लगे। आजकल, भूमि उपयोग के बदलते स्वरूप में सतत विकास की आवश्यकता महसूस की जा रही है। यह सुनिश्चित करना कि भूमि का उपयोग आर्थिक विकास के साथ–साथ पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखते हुए किया जाए, बहुत महत्वपूर्ण है। इसके लिए भूमि संरक्षण, पर्यावरणीय नीतियाँ, और हरित प्रौद्योगिकी को अपनाना आवश्यक है।

परिचयात्मक शोध का महत्त्व

राजस्थान की अर्थव्यस्था का मुख्य आधार कृषि है। राज्य की लगभग 76 प्रतिशत जनसंख्या कृषि एवं पशुपालन से ही अपना जीविकोपार्जन करती है। राजस्थान का अधिकांश भाग शुष्क प्रदेश है, जिसमें पानी का अभाव हैं। फलस्वरूप सिंचाई के साधनों का अधिकतम उपयोग कृषि के विकास हेतु पानी उपलब्ध कराने के लिए राज्य सरकार सतत् प्रयास कर रही है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार राज्य में वास्तविक बोया गया क्षेत्र 93.3 लाख हैक्टेयर था, जो बढ़कर 2000–01 में 158.65 लाख हैक्टेयर हो गया है। इस प्रकार सकल बोया गया क्षेत्रफल 1951 में 97.5 लाख हैक्टेयर था,जो 2000–01 में 192.30 लाख हैक्टेयर हो गया है।

राज्य में भूमि उपयोग के कुल क्षेत्रफल का लगभग 7.49 प्रतिशतभाग बंजर तथा अकृषिगत भूमि है। 14.32 प्रतिशत क्षेत्रफल चालू पड़त तथा 7.3 चालू पड़त है। वर्ष 2000–01 में राज्य भूमि उपयोग के अन्तर्गत 26.60 लाख हैक्टेयर पर वन, 43.08 लाख हेक्टेयर कृषि हेतु अनुपलब्ध, 66.29 लाख हैक्टेयर जोत रहित भूमि, 492.30 लाख हैक्टेयर सकल बोया हुआ क्षेत्र तथा 33.65 लाख हैक्टेयर पर एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल है। लगभग 40 प्रतिशत से भी अधिक क्षेत्रफल कृषि कार्यो के लिए प्रयुक्त नहीं किया जाता है।

परिचयात्मक शोध के उद्देश्य

1. भूमि उपयोग की समस्याओं का भौतिक तत्वों के अंतर्गत आंकलन और अध्ययन।
2. भूमि उपयोग की नगरीय व ग्रामीण भूमि के संदर्भ में अध्ययन व विश्लेषण।
3. भूमि के उपयोग का सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में परिवर्तन होता है।
4. किसी सी क्षेत्र के लिए अनुकूलतम एव बहुद्देश्यी भूमि उपयोग की विवेचना करना तथा उसके सुझावो को क्षेत्रीय अंगीकरण हेतु समन्वित करना।

परिचयात्मक शोध का निष्कर्ष

भूमि एक ससाधन है और संसाधनों का आधारभूत स्रोत भी। भूमि वह स्थान हैं जहां मानव जाति, जीव–जन्तु, वनस्पति स्वयं में तथा आपस में क्रियाएं तथा प्रतिक्रियाएं करते हैं और एक विशेष प्रकार का पर्यावरण विकसित करते हैं। भूमि, संसाधन की वह तस्वीर है जो किसी देश, प्रदेश या क्षेत्र विशेष के विकास में अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती हैं और वहां पर विकसित भौतिक

तथा सांस्कृतिक दृश्यावली का निर्माण करती हैं और समय के साथ–साथ परिवर्तनशीलता का रूप भी प्रदान करती है। वास्तव में भूमि और भूमि उपयोग कार्यत्मकता के माध्यम से एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. एच.सी. सक्सेना (2000): राजस्थान की अर्थव्यवस्था
2. एच एस. शर्मा,: राजस्थान का भूगोलपंचशील प्रकाशन, जयपुर
3. एम एल शर्मा, एल.आर. भल्ला (2007):राजस्थान का भूगोल कुलदीप पब्लिकेशन्स हाऊस, जयपुर
4. एल आर. भल्ला (2008): भूगोल कुलदीप पब्लिकेशन्स हाऊस, जयपुर
5. लक्ष्मी नारायण वर्मा (2007): अधिवास भूगोल अकादमी प्रकाशन, जयपुर